ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2019; 5(4): 531-533
www.allresearchjournal.com
Received: 21-02-2019
Accepted: 25-03-2019

Dr. Sunita Kumari
Assistant Professor, Department of AI & As, Ancient History, Sanjay Singh Yadav College Gaya, Bihar, India

Corresponding Author:
Dr. Sunita Kumari
Assistant Professor, Department of AI & As, Ancient History, Sanjay Singh Yadav College Gaya, Bihar, India

बौद्ध धर्म में राजनैतिक शिक्षा

Dr. Sunita Kumari

प्रस्तावना:

बुद्ध के समकालीन भारतीय राजनीतिक चित्रण अष्टाधयाी में वर्णित महाजनपदों, जनपदों एवं गणराज्यों के रूप में भगवान बुद्ध का जन्म आज से ढाई हजार वर्ष हुआ था। उस समय संसार में शायद 'राष्ट्र' नाम की संकल्पना भी पैदा नहीं हुई होगी। ज्यादातर आधुनिक राजनीतिक शास्त्र के जानकार यह मानते हैं कि 'राष्ट्र' नाम की संकल्पना आधनिक ही है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद आदि कोई राजनैतिक संकल्पना नहीं है।

पालि–त्रिपिटक साहित्य में कई गणराज्यों का उल्लेख आता है। कुछ लोगों का मानना है कि भगवान बुद्ध के समय में भारत में सोलह (16) महाजनपद और दस (10) गणराज्य थे। ये (16) सोलह गणराज्य भारत के मध्य और उत्तर पूर्व प्रदेशों में था। लेकिन दक्षिण भारत की राजनीतिक स्थिति के बारे में और भारत के अन्य प्रदेशों की राजनैतिक स्थिति के बारे में हमारे पास कोई पर्याप्त जानकारी नहीं है, इसलिए वहाँ की राजनीतिक स्थिति, व्यवस्था किस प्रकार की थी इसके बारे में हमारे पास कोई पर्याप्त और सही जानकारी नहीं है।

डॉ0 बी0 आर0 अम्बेदकर ने 'बुद्ध और उनका धम्म' में भगवान बुद्ध के समय के भारत की राजनीतिक स्थिति के बारे में लिखा है कि ईसा पूर्व छठी शताब्दी में देश अनेक छोटे–बड़े राज्यों में बंटा हुआ था। इनमें कुछ राज्यों में प्रत्येक पर जहाँ एक अकेले राजा काअधिकर था, वहीं कुछ पर किसी अकेले राजा का अधिकार नहीं था। जो राज्य राजाओं के अधीन थे उनकी कुल संख्या (16) थी और वे इस प्रकार थे। 1. अंग 2. मगध 3. कासी 4. कोसल, 5. वज्जि 6. चेदि 7. 8. वत्स 9. कुरू 10. पांचाल 11. मत्स्य 12. शूरसेन 13. अश्मक 14. अवंति 15. गांधार और 16. कम्बोज। जिन राज्यों में किसी राजा का अधिकार नहीं था वे इस प्रकार थे। 1. कपिलवस्तु के शाक्य 2. पावा तथा कुसीनारा के मल्ल, 3. वैशाली के लिच्छवी 4. मिथिला के विदेह 5. रामगाँव के कोलिय, 6. अल्लकाप के बुलि 7. केसपुत के कालाम 8. रेसपुत के कलिंग 9. पिप्पलवन के मौर्य और 10. भग्ग जिनकी राजधानी सुंसुभारगिरि थी। इस प्रकार डॉ0 अम्बेडकर साहब ने बौ0 वाड्मय में जनपदों ओर गणराज्यों की व्याख्या की है।

उन्होंने यह भी कहा कि जिन राज्यों पर किसी एक राजा का अधिकार था वे जनपद और जिन राज्यों पर किसी का अधिकार नहीं था वे संघ या गण कहलाते थे। कपिलवस्तु के शाक्यों की राज्यव्यवस्था के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है कि वहाँ गणतंत्र था अथवा कुछ लोगों का कुल तंत्र था। वैसे इतनी जानकारी तो स्पष्ट रूप से है कि शाक्यों के गणतंत्र में कई शासक परिवार थे और एक के बाद एक एक क्रम में शासन करते थे। शासक परिवार के जो मुखिया होते थे, वे राजा कहलाते थे। शाक्य राज्य भारत के उत्तर पूर्वी कोने में स्थित था। यह एक स्वतंत्र राज्य था। लेकिन आगे चलकर कोशलराज इस पर अपना अधिपत्य में सफल हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि कोसलराज की स्वीकृति के बिना शाक्य राज्य के लिए अपने कुछ राजकीय अधिकारों का उपयोग असम्भव हो गया। उस समय के राज्यों में कोशल एक शक्तिशाली राज्य था। मगध राज्य भी ऐसा ही था। कोशल राजा पसेनदी (प्रसेनजीत) और मगध राजा बिम्बिसार दोनों भगवान बुद्ध के समकालीन थे। मतलब बुद्ध काल में भारत नाम का कोई देश नही था। बल्कि सभी जनपदों और गणराज्यों को अपनी अलग अलग राजनीतिक व्यवस्था थी।

राजनीति में कामभोगों का परित्याग

कामभोगों के कई दुस्परिणाम बताकर भगवान बुद्ध ने कामभोगों के प्रति अनासत्क होने का, उसमें इच्छा न उत्पन्न होने देने का उपदेश दिया है, इसी को कामभोगों का निस्सरण कहा है। भगवान बुद्ध कहते हैं कि, जो कोई इस प्रकार कामों के आस्वाद, कामों के दुस्परिणाम, दुस्परिणामों से निस्सरण (छुटकारा), निस्सरण से उसे यथाभूत नही जानते, वह स्वयं को छोड़ेंगे,

या दूसरों को वैसा करने के लिए शिक्षा देंगे, जिस पर चलकर ही वह पुरूष कामों को छोड़ेगा यह सम्भव नहीं है। जो कोई इस प्रकार कामों के आस्वाद, आस्वाद के दुस्परिणाम, दुस्परिणाम से छूटकार (निस्सरण), निस्सरण से उसे यथाभूत जानते है, वह स्वयं कामों का त्याग करेंगे, यही सम्भव है। इस तरह से कुटदंत सुत्त में भगवान बुद्ध ने कहा है क पहले कामभोगों के दुस्परिणामों को जानना जरूरी है और जो जानता है वही उससे मुक्त हो सकता है। उसी प्रकार भगवान बुद्ध ने इस सुत्त में स्पष्ट रूप से यह कहा है कि संसार में, राजा राजाओं में कलह, विवाद, संघर्ष का कारण कामभोग की भावना ही है। आधुनिक राजनीतिक परिवेश में भगवान बुद्ध की यह शिक्षा बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

राजनीति में लोभ का परित्याग

मज्झिमनिकाय के चूलदुक्खक्खन्ध में भगवान बुद्ध ने लोभ के परित्याग तथा सही राजनीति की शिक्षा का उपदेश दिया है। इस सुत्त में भगवान बुद्ध ने कहा है कि, कामभोग अप्रसन्न करनेवाले हैं, बहुत दुख देनेवाले हैं। बहुत परेशानी देनेवाले हैं, इसमें दुष्परिणाम बहुत है। इसलिए जो व्यक्ति यथार्थ रूप में अच्छी प्रकार जानकर इसे देख लेता है, तो वह कामों अकुशल धर्मो से, अलग ही में प्रीतिसुख या उससे भी अधिक शांत कर सुख को नहीं पाता, वह कामभोगों में लौटनेवाला होता है। लेकिन जब कामभोग अप्रसन्न करनेवाले हैं, बहुत दुःख देनेवाले हैं, बहुत परेशानी करनेवाले मालूम होते हैं। 'इनमें दोष बहुत है' इसे जब वह यथार्थरूप में अच्छी तरह जानकर देख लेता है तो वह कामों से अलग, अकुशल धर्मो से अलग हो प्रीतिसुख या उससे शान्ततर सुख पाता है, तब वह कामभोगों की ओर न लौटनेवाला होता है। भगवान बुद्ध ने मंज्झिमनिकाय के वितक्कसण्ठान सुत्त में राग, द्वेष और मोह को कैसे समाप्त किया इस बात का उपदेश दिया है।

राजनीति में अकुशलता का त्याग

समाज में, देश में, राष्ट्रों के बीच में कलह, विवाद, संघर्ष अशांति का कारण है– अकुलश बातें, अकुशल व्यवहार मज्झिमनिकाय के ककचूपम सुत्त में भगवान बुद्ध ने अकुशल बातों के दुष्परिणाम बताये हैं और उन्होंने कहा कि इसलिए भिक्खुओं, तुम भी अकुशल को छोड़ों। कुशल धर्मो में लगो। इस प्रकार तुम भी इस धर्म में वृद्धि, विपुलता को प्राप्त होंगे, बुराई को छोड़ों, वृद्धि को, विपुलता को प्राप्त होंगे। मतलब यह कि अकुशल कर्म करने से हानि होती है और कुशल कर्म करने से वृद्धि होती है, विकास होता है मनुष्य विपुलता को प्राप्त होती है,

पालि त्रिपिटक साहित्य में ऐसे कई सुत्त हैं, जहाँ भगवान बुद्ध ने अकुशल बातें, अकुशल कर्मो के परिणामों की बड़े विस्तार से चर्चा की है और कुशल कर्मो की प्रशंसा की है। भगवान बुद्ध के शासन को समझने के लिए उनकी ही एक प्रसिद्ध गाथा हैं –

सब्ब पापस्स अकरणं, कुसलस्स उपसम्पदा।
सचित परियोदपणं, एतं बुद्धान सासनं ।।

अर्थात् सभी प्रकार के पाप यानी अकुशल बातों को न करना, कुशल बातों का सम्पदान करना, अपने चित्त को संयमित करना यही बुद्धों का शासन है, शिक्षा है। बुद्ध की इस प्रकार की शिक्षा को यदि जीवन में अपनाया जाता है तो व्यक्ति में, समाज में, राष्ट्र में कभी विवाद, संघर्ष, युद्ध जैसी स्थिति पैदा नहीं हो सकती।

प्रज्ञा से परखने की शिक्षा

भगवान बुद्ध के धम्मसासन में शील, समाधि और प्रज्ञा का बड़ा महत्व है। बौद्ध आचार्यो ने सम्पूर्ण बुद्धवचनों को इन तीन बातों में, तीन भागों में विभाजित किया है। शील, समाधि और प्रज्ञा पर आधारित भगवान बुद्ध की शिक्षा केवल व्यक्तिगत, विशुद्ध जीवन की और मुक्ति प्राप्त करने की चीज नहीं है। बल्कि भगवान बुद्ध की शील, समाधि और प्रज्ञा की शिक्षा आज के राजनीतिक जीवन में भी, राष्ट्रीय जीवन में भी और शांति की स्थापना करने में भी बहुत ही उपयुक्त और महत्वूपर्ण है। किसी भी देश में सुशासन की स्थापना के लिए, शांति और अमन–चमन की स्थापना के लिए जो शासक वर्ग है, जो राजनीतिक दलों के नेता हैं कार्यकर्त्ता हैं, वे शील, समाधि और प्रज्ञा में स्थापित होने चाहिए। अगर वे शीलवान, चरित्रवान नहीं है, संयमी जीवन जीनेवाले नहीं है, प्रज्ञावान, बुद्धिवान, ज्ञानवान नहीं है तो वे लोककल्याणकारी राज्य का निर्माण करने में सक्षम नहीं है।

संघ व्यक्ति के ऊपर

भगवान बुद्ध ने मज्झिमनिकाय के दक्खिणाविभंग सुत्त में संघ को व्यक्ति से ऊपर माना है। मतलब उन्होंने व्यक्ति से भी संघ को ज्यादा महत्व दिया है। आधुनिक राजनीतिक सिद्धांतों में एक तंत्र और जनतंत्र के भी महत्व वर्णन किया गया है तो दूसरी ओर समाजवाद का, समाजवादी वर्णन किया गया है तो दूसरी ओर समाजवाद का, समाजवादी मूल्यों का और जीवनप्रणाली का भी महत्त्व वर्णन किया गया है। मतलब आधुनिक राजनीतिक विचारधारा में व्यक्ति के महत्त्व के साथ–साथ समाज, समूह, संघ को भी महत्त्व दिया गया है और माना गया है कि समाजवादी व्यवस्था के बगैर लोकतंत्र अधूरा है।

'दक्खिणाविभंग सुत्त' में कहा गया है कि, एक समय भगवान बुद्ध साक्य जनपद में कपिलवत्थु के न्यग्गोधाराम में विहार कर रहे थे तब प्रजापति गौतमी नये धुस्से (चीवर) के जोड़े को लेकर, जहाँ भगवान बुद्ध विहार कर रहे थे, वहाँ आयी। भगवान को अभिवादन करके एक और बैठ गई। एक और बैठी, महाप्रजापति गोतमी ने भगवान बुद्ध ने कहा, भन्ते ! यह अपना ही काता, अपना ही बुना, मेरा यह नया धुस्सा जोड़ा आपको अर्पण है। भन्ते! आप अनुकम्पा करके इसे स्वीकार करें। ऐसा कहने पर भगवान बुद्ध ने महाप्रजापति गोतमी ने कहा –

"हे गोतमी इसे संघ को दे दे। संघ को देने से मैं भी पूजित हूँगा और संघ भी। दूसरी बार भी गोतमी ने अनुरोध किया और दूसरी बार भी भगवान बुद्ध ने यही कहा। तीसरी बार भी गोतमी ने अनुरोध किया और भगवान बुद्ध ने तीसरी बार भी यही कहा।

भगवान बुद्ध के संघ में किसी प्रकार का वर्गवाद, वर्णवाद या जातिवाद नहीं था, कोई भी व्यक्ति संघ में सम्मिलत हो सकता था। भगवान बुद्ध के संध के महासागर की उपमा दी गई है। जैसे विभिन्न प्रदेशों से बहकर आनेवाली नदियां सागर में बहकर आती है और सबका पानी एक रूप हो जाता है। उसी प्रकार संघ भी है। जो संघ में आता है वह अपनी जाति, गोत्र, कूल, को भूलकर, त्यागकर संघ में मिल जाता है। वह जातिमुक्त, वर्णमुक्त, वर्गमुक्त हो जाता है। यही संघ की सबसे बड़ी विशेषता है। आधुनिक काल में समाजवादी समाज व्यवस्था के निर्माण में हमें भगवान बुद्ध के संघ संबंधी विचारधारा से मार्गदर्शन प्राप्त हो सकता है।

लोकतांत्रिक पद्धति

भगवान बुद्ध का संघ पूरी तरह से लोकतांत्रिक पद्धति को स्वीकार करता है। पालि विनयपिटक में भगवान बुद्ध ने भिक्खूसंघ के लिये, भिक्खुणी संघ के लिए उपोसथ का विधान किया है। भिक्खू उपोसथ और भिक्खुणी उपोसथ की सारी कार्यवाही लोकतांत्रिक ढंग से ही होती थी। भगवान बुद्ध ने चतुद्दसी, पुण्णमासी और पक्ष की अष्टमी को उपोसथ करने की अनुमति दी थी। भगवान बुद्ध सारा उपोसथ करने की अनुमति दी थी। भगवान बुद्ध द्वारा भिक्खु संघ और भिक्खुणी संघ को उपोसथ का विधान एक तरह से सशक्त बनाने का और अधिक से अधिक परिशुद्ध बनाने का, रखने का प्रयास था।

विनयपिटक के भिक्खु– पातिमोक्ख के निदान में भिक्खु संघ के उपोसथ की कार्यवाही का विस्तार से ब्यौरा दिया गया है। उसी प्रकार भिक्खुणी पातिमोक्ख के निदान में भी भिक्खुणी संघ के उपोसथ की कार्यवाही का विस्तार से ब्यौरा दिया गया है। इसमें कहा गया है, जब संघ उपोसथ के लिए इकट्ठा होता है और उपोसथ शुद्ध होने पर सबसे पहले एक भिक्खू संघ से कहता है कि, भन्ते ! संघ मेरी बात को सुने, यदि संघ को पसंद हो तो मैं इस नाम के आयुस्मान से विनय पूछूँ।

फिर चुना जानेवाला भिक्खू कहता है कि, भन्ते! संघ मेरी बात को सुने, यदि संघ को पसंद हो तो मैं इस नाम के आयुस्मान द्वारा पूछे गये विनय का उत्तर दूँ। फिर संघ के समय मांगकर पूर्ण करने योग्य बातें क्या है, उसके बारे में बताया जाता है। फिर अपने दोषों को (एक दूसरे को) बतलाकर एकत्रित हुए भिक्खूसंघ की अनुमति से पातिमोक्ख से पाठ (आवृति) के लिए प्रार्थना की जाती है।

राजनीति में अहिंसा और शांति की पद्धति है। आधुनिक लोकतंत्र का आधार है समता, स्वतंत्रता, बन्धुता और सामाजिक न्याय। भगवान बुद्ध की शिक्षा भी यही है, उनके धम्म का आधार भी यही है। भगवान बुद्ध की शिक्षा में, धम्म में अहिंसा अथवा हत्या न करना, हत्या करने में प्रेरित न करना को भी बड़ा महत्त्व है। यह उनकी शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। डॉ0 आम्बेडकर 'भगवान बुद्ध और उनका धम्म' में लिखते हैं कि अहिंसा का करूणा और मैत्री से अत्यंत निकट का संबंध है। उन्होंने भगवान बुद्ध की अहिंसा की संकल्पना को बहुत ही नये ढंग से परिभाषित किया है। भगवान बुद्ध की अहिंसा की संकल्पना का निश्चित रूप से शांति की संकल्पना के साथ निकट का संबंध है। अहिंसा का दूसरा अर्थ शान्ति ही हो सकता है। आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था में अहिंसा और शांति का बड़ा महत्त्व हैं। मानव समाज का अस्तित्व ही शांति और अहिंसा पर टिका हुआ है।

दीघनिकाय के कुटदन्त सुत्त में यह वर्णन आया है कि, उस समय कुटदन्त ब्राह्मण मगधराज सेणिय बिंबिसार द्वारा प्रदत्त, जनाकीर्ण, घास लकड़ी, जल, धान्य सम्पन्न राजभोग राजदाय, ब्रह्मदेय खाणुमत का स्वामी होकर रहता था। उस समय कुटदन्त ब्राह्मण को महाया करने की इच्छा हुई थी। उसके लिए सात सौ बैल, सात सौ बछड़े, सात सौ बछड़ियाँ, सात सौ बकरियाँ, सात सौ भेड़ यज्ञ के लिये स्थूण पर लाई गई थी।

उस समय भगवान बुद्ध बड़े भिक्खूसंघ के साथ खाणुमत में विहार कर रहे थे। कुटदन्त ब्राह्मण भगवान बुद्ध से मिलने के लिए गया था और उसने भगवान बुद्ध को अपनी यज्ञ करने की बात कही। तब भगवान बुद्ध ने उस कुटदन्त ब्राह्मण को महाविजित जातक का उपदेश दिया और हिंसक यज्ञ का विरोध किया था। कुटदन्त सुत्त में भगवान बुद्ध का उपदेश अहिंसा, शांति और प्रजा के कल्याण की दृष्टि से आज की राजनीति का निश्चित रूप से मार्गदर्शक हैं। महाविजित जातक के माध्यम से भगवान बुद्ध ने उस कुटदन्त ब्राह्मण को कहा कि, राजा के जनपद में जो खेती, गाय की रक्षा करना चाहते हैं, उन्हें राजा को बीज भत्ता देना चाहिए। जो राजा के जनपद में वाणिज्य करने के उत्साही हैं, उन्हें पूंजी देनी चाहिये। जो राजा के जनपद में राज–पुरूषार्थ में उत्साही हैं, उनका भत्ता–वेतन ठीक कर देना चाहिये। उससे मनुष्य अपने काम में लग जायेंगे और राजा के जनपद को नहीं सतायेंगे। इससे राजा को महाधनराशि प्राप्त होगी। जनपद, अकंटक, अपीड़ित कुशलयुक्त से जायेगा। लोग खुश, आनंदी, गोद में बेटों को नचाते हुये खुले घर विहार करेंगे। इस तरह की भगवान बुद्ध की शिक्षा से आधुनिक राजनीतिक को एक नई दिशा, नई राह प्राप्त हो सकती है और राज्य में अहिंसा और शांति की स्थापना हो सकती है और राज्य का आर्थिक और हर तरह का विकास हो सकता है। विकास का मतलब कुछ राजपरिवारों के पास, कुछ उद्योगपतियों के पास धन और पूंजी का इकट्ठा होना नहीं है।

इस तरह से भगवान बुद्ध की शिक्षाओं में आधुनिक राजनैतिक एकता और शांति के लिए कई मार्गदर्शक संकल्पनाएँ हैं। सम्पूर्ण पालि–तिपिटक बुद्ध के विचारों से भरा हुआ है। बुद्ध की शिक्षाएँ आज के समाज के लिए निश्चित रूप से मार्गदर्शक हैं।

आज सभी लोग इस बात को स्वीकार करते हैं संसार में सामाजिक एकता के स ाथ राजनीतिक एकता की बात होनी चाहिए, सभी समाजों और देशों में शांति की बात होनी चाहिए क्योंकि राजनीतिक बेबनाव, विघटन और अशान्ति मानव समाज को विनाश के किसी भी कगार पर ले जाकर खड़ा कर सकती है। यह किसी भी समाज के देश के विकास के लिए हितकारी, लाभदायी नहीं है। अशांति तो विनाश की आग तरह होती है जो सब कुछ नष्ट कर देता है। मानव समाज के इतिहास में इस तरह के कई उदाहरण दिखायी देते हैं। इस तरह की स्थिति में भगवान बुद्ध के किसी तरह के विचार उनके सिद्धांत, आधुनिक मानव समाज में एकता और शांति को स्थापित के लिए उपयोगी साबित हो सकते हैं यही महत्त्वपूर्ण सवाल है। भगवान बुद्ध आज इस संसार में नहीं है, लेकिन उनके द्वारा दिए गए उपदेश, विचार, राजनीतिक, चेतना, आधुनिक भारत ही नहीं बल्कि पूरे संसार में एकता, अखण्डता और शांति की स्थापना आदि चिन्तन के विषय अवश्य हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. अम्बेदकर, डॉ0 बी0आर0, भगवान बुद्ध और उनका धम्म (हिन्दी डॉ0 भ0 आ0 कौसल्यायन) संस्करण, 2008, स0 प्र0
2. सांस्कृत्यायन राहुल, मज्झिमनिकाय, महादुक्खन्ध सुत्त (हिन्दी)
3. धम्मपद, बुद्धवग्ग, गाथा– 5
4. अभिधम्म पिटक,
5. सांस्कृत्यायन राहुल, विनयपिटक (हिंदी),
6. सांस्कृत्यायन राहुल, दीघनिकाय (हिंदी), (कूटदन्त सुत्त)